13

पुलपिट के लिए क्रूस

(मत्ती 27:46; लूका 23:34-46; यूहन्ना 19:25-30)

संसार का सबसे बड़ा विदाई संदेश क्रूस की पुलपिट से गुलगुता के प्रार्थना भवन में, फसह से पहले वाले शुक्रवार के दिन, मसीह के जन्म से लगभग तीस वर्ष बाद दिया गया था।[1]

वचन में हज़ारों सालों की और सैकड़ों पुरुषों और स्त्रियों के जीवन के दौरान कही गई बातें तो सम्मिलित हैं, परन्तु मर रहे बहुत कम लोगों के शब्द हैं। उनमें से एक तो इस्राएल था; एक मूसा और तीसरा स्तिफनुस था।[2] इस्राएल चुनी हुई कौम में सर्वप्रथम था; मूसा धर्म शास्त्र देने वाला पहला आदमी था और स्तिफनुस मसीहियत के लिए मरने वाला पहला शहीद। परन्तु जैसे सुसमाचार के लिखने वालों ने कलवरी की फ़िज़ा में से ''छुटकारे के सात सुरों की सरगम'' लिखी, वैसे कोई और लेखक अन्य मरने वालों की बात नहीं लिख पाया।

अपनी निजी सेवकाई के दौरान, यीशु ने पहाड़, मकान की छत, नाव और कुएं आदि को पुलपिट के रूप में इस्तेमाल किया, पर क्रूस जैसा पुलपिट उसे कहीं नहीं मिला। न तो मर रहे प्रभु जैसा प्रचारक था, न खोपड़ी नामक जगह पर इकट्ठे हुए लोगों जैसी मण्डली और न यीशु के अन्तिम सात वचनों जैसा कोई उपदेश।

क्षमा के वचन: ''इन्हें क्षमा कर'' (लूका 23:34)

क्रूस देने के लिए ले जा रहे जुलूस के कलवरी पर पहुंचने पर यीशु के वस्त्र खींच कर उतार दिए गए। इससे पांच दिन पहले ही यीशु के मार्ग में बिछाने के लिए यरूशलेम के लोगों ने अपने वस्त्र उतारे थे; अब उन्हीं लोगों ने उसके वस्त्र उतार दिए। यीशु ने अपने जल्लादों की ओर अपने हाथ बढ़ाए। वे हाथ, जिन्होंने कभी किसी को हानि नहीं पहुंचाई थी; हाथ, जिनमें से आशिषें निकलती हैं। हथौड़ों के आवाज़ नीचे से शहरपनाह से टकराकर वापस आ रही थी। क्रूस धीरे-धीरे ऊपर उठाया गया और फिर ठक की आवाज़, जिससे आसमान कांप गया; उसे पहले से खोदे हुए गड्ढे में गाड़ दिया गया। यीशु अपने मंच पर चढ़ गया था।

क्रूस पर से बोले गए सब से पहले शब्द थे: ''हे पिता, इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये जानते नहीं कि क्या कर रहे हैं'' (लूका 23:34)। यीशु का पहला वचन, चौथे और सातवें वचन की तरह प्रार्थना थी। यीशु के कष्ट के आरम्भ, बीच और अन्त का समय परमेश्वर का पवित्र संगति में डूबा हुआ था।

क्रूस पर मरने वाले लोग कभी प्रार्थना नहीं करते थे। क्रूस देना मृत्यु को हर सम्भव पीड़ादायक बनाने के लिए दुष्ट मनों की खोज थी। अधिकारियों का मानना था कि क्रूस पर मरने वाले लोग दर्द से पागल होकर कराहते हैं, गिड़गिड़ाते हैं, गालियां बकते और देखने वालों पर थूकते थे, पर यीशु ने प्रार्थना की।

यीशु के मन में सब से पहली बात अपना दु:ख नहीं, बल्कि वह नुक्सान था, जो उसके सताने वाले अपना कर रहे थे। उस पेड़ की तरह जो उसे काटने वाली कुल्हाड़ी को महका देता है, यीशु ने कहा, ''हे मेरे पिता, मुझ पर से अपनी दया चाहे हटा ले परन्तु इन पर से मत हटाना।''

अपनी निजी सेवकाई के दौरान यीशु ने क्षमा के बारे में कई बार समझाया:

> और जिस प्रकार हमने अपने अपराधियों को क्षमा किया है, वैसे ही तू हमारे अपराधों को भी क्षमा कर।... इसलिए यदि तुम मनुष्यों के अपराध क्षमा करोगे, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुम्हें क्षमा करेगा। और यदि तुम मनुष्यों के अपराध क्षमा न करोगे, तो तुम्हारा पिता भी तुम्हारे अपराध क्षमा न करेगा (मत्ती 6:12, 14, 15)।

> तब पतरस ने पास आकर, उस से कहा, हे प्रभु, यदि मेरा भाई अपराध करता रहे, तो मैं कितनी बार उसे क्षमा करूं, क्या सात बार तक? यीशु ने उस से कहा, मैं तुझ से यह नहीं कहता कि सात बार, वरन सात बार के सत्तर गुणा तक।... इसी प्रकार यदि तुम में से हर एक अपने भाई को मन से क्षमा न करे, तो मेरा पिता जो स्वर्ग में है, तुम से भी वैसा ही करेगा (मत्ती 18:21, 22, 35)।

परन्तु क्षमा पर यीशु की सबसे बड़ी शिक्षा क्रूस पर दी गई, जिसमें उसने अपनी शिक्षा को *प्रमाणित भी किया*।

यूनानी भाषा में लूका 23:34 में क्रिया अपूर्ण रूप में है, जो ''कालांतर में निरन्तर क्रिया'' का संकेत देता है। हमारे वचन पाठ का ''परन्तु यीशु कह रहा *था*...'' का अनुवाद ''परन्तु यीशु ने कहना जारी *रखा*'' हो सकता है। अन्य शब्दों में, यीशु ने ये शब्द कई बार कहे होंगे।

ये दृश्य ऐसे हो सकते हैं: खोपड़ी नामक स्थान पर पहुंचकर चारों ओर देखते हुए प्रार्थना की, ''हे पिता इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं।'' सूबेदार द्वारा यीशु को भूमि पर गिराए जाने पर उसने प्रार्थना की, ''हे पिता इन्हें क्षमा कर क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं।'' खुरदरे भाले द्वारा हथेलियों को चीरने पर उसने कहा, ''हे पिता इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं।'' जब क्रूस खड़ा किया जा रहा था तो उसने प्रार्थना की, ''हे पिता इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं।'' जब भीड़ उसे ताने मार रही थी और उसका अपमान कर रही थी तो यीशु ने प्रार्थना की, ''हे पिता इन्हें क्षमा कर क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं।'' जब सिपाहियों ने उसके अनसिले/बिना सिलाई के चोगे के लिए पर्चियां डालीं तो यीशु ने प्रार्थना की, ''हे पिता इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं।''

बेशक, हमें सब कुछ तो पता नहीं कि वहां क्या-क्या हुआ होगा, परन्तु इतना अवश्य जानते हैं, यीशु प्रार्थना करता रहा कि ''हे पिता इन्हें क्षमा कर क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं।''

हमें ध्यान देने की आवश्यकता है कि पिता की ओर से क्षमा पिन्तेकुस्त के दिन तक नहीं दी गई थी और यह केवल उन्हीं को दी गई थी, जिन्होंने मन फिरा कर बपतिस्मा लिया था (तुलना करें प्रेरितों 2:38)। हम इस बात पर ज़ोर दे रहे हैं कि मरते समय यीशु के मन में किसी के प्रति कोई कड़वाहट नहीं थी। आपको और मुझे भी यीशु जैसा बनना सीखने की आवश्यकता है: हमें अपने बैरियों से प्रेम रखना और अपने सताने वालों के लिए प्रार्थना करना सीखने की आवश्यकता

है (मत्ती 5:44)!

आशा के वचन: ''मेरे साथ'' (लूका 23:39-43)

क्रूस पर चढ़े लोगों को ऐसे लगता है कि जैसे वे वहीं रहेंगे। क्रूस के आस-पास ठट्ठे करते लोगों की भीड़ उसे और बढ़ावा दे रही थी। वे चिल्ला रहे थे, ''इसने औरों को बचाया, पर अपने को नहीं बचा सकता। इस्राएल का राजा, मसीह, अब क्रूस पर से उतर आए कि हम देखकर विश्वास करें'' (मरकुस 15:31, 32)। मरकुस ने लिखा कि ''जो उसके साथ क्रूसों पर चढ़ाए गए थे, वे भी उसकी निन्दा करते थे'' (मरकुस 15:32)।

धीरे-धीरे एक डाकू बीच वाले क्रूस पर चढ़े मनुष्य को एक अलग रोशनी में देखने लगा। यीशु की किसी बात ने उसके मन को छू लिया था। शायद मुत्यु का सामना करते हुए उसकी शान ने। शायद उसके बार-बार ''हे, पिता इन्हें क्षमा कर'' कहने से वह प्रभावित हुआ था। कारण जो भी रहा हो, उस डाकू का विश्वास बढ़ता गया और उसे विश्वास हो गया। इसलिए हम पढ़ते हैं:

> जो कुकर्मी लटकाए गए थे, उन में से एक ने उस की निन्दा करके कहा; क्या तू मसीह नहीं? तो फिर अपने आप को और हमें बचा। इस पर दूसरे ने उसे डांटकर कहा, क्या तू परमेश्वर से भी नहीं डरता? तू भी तो वही दण्ड पा रहा है। और हम तो न्यायानुसार दण्ड पा रहे हैं, क्योंकि हम अपने कामों का ठीक फल पा रहे हैं; पर इस ने कोई अनुचित काम नहीं किया। तब उस ने कहा; हे यीशु, जब तू अपने राज्य में आए, तो मेरी सुधि लेना। उस ने उस से कहा, मैं तुझ से सच कहता हूं, कि आज ही तू मेरे साथ स्वर्गलोक में होगा (लूका 23:39-43)।

क्रूस पर भी शैतान ने यीशु पर आक्रमण कम नहीं किया। जंगल में शैतान ने यीशु से कहा था कि वह बिना क्रूस चढ़े संसार का सारा राज्य ले सकता है[3] (मत्ती 4:8, 9)। यीशु की निजी सेवकाई के अन्त के निकट शैतान ने यीशु को क्रूस की बात भुला देने के लिए ही पतरस को उभारा था (मत्ती 16:21-23)। अब जब यीशु मर रहा था तो शैतान ने एक डाकू के माध्यम से बातचीत करके यीशु को मुत्यु से बचाने और क्रूस से नीचे उतारने को ललकारा।

जीवन भर यीशु को अपने आप को बचाने और बलिदान होने के विकल्पों में से एक को चुनने के लिए कहा गया। क्रूस पर भी उसके पास दोनों विकल्प थे।

विश्वास न करने वाले डाकू ने यीशु को अपने आप को बचाने की बात चुनने की पेशकश की, ''क्या तू मसीह नहीं? तो फिर अपने आप को और हमें बचा'' (लूका 23:39)। इस डाकू द्वारा इस्तेमाल किया गया तरीका जंगल में शैतान द्वारा इस्तेमाल किए गए ढंग से मेल खाता है: ''यदि तू परमेश्वर का पुत्र है तो कह दे कि ये पत्थर रोटियां बन जाएं'' (मत्ती 4:3)। अन्य शब्दों में वह कह रहा था कि ''बिना किसी लाभ के मसीह होने का कोई औचित्य नहीं है।[4] ये लाभ ले और हमें भी दिखा कि तू सचमुच वही है।'' ए. टी. रॉबर्टसन ने कहा है कि उस डाकू का आग्रह ''जेल तोड़ने का प्रयास करने जैसा था।'' यानी डाकू यह सुझाव दे रहा था कि यीशु जेल तोड़ दे!

विश्वास करने वाले डाकू ने बलिदान देने की इच्छा व्यक्त की: ''हे यीशु, जब तू अपने राज्य में आए, तो मेरी सुधि लेना'' (लूका 23:42)। अन्य शब्दों में, वह यीशु को ''क्रूस पर रहने और

अपना राज्य जीतने'' के लिए प्रेरित कर रहा था। इस व्यक्ति का विश्वास कितना था! यीशु की ओर देखने पर वह उसे दण्ड पाया हुआ अपराधी नहीं, बल्कि उसने उसमें एक राजा को देखा! कांटों के मुकुट की जगह एक शाही मुकुट देखा। यीशु के घायल शरीर में से और जम रहे लहू को, उसने शाही किरमची वस्त्र के रूप में देखा।

इन आयतों में फिर से अपूर्ण वाक्य का इस्तेमाल हुआ है। दोनों डाकुओं ने अपने बचाव या अपनी आहूति को चुनने की पेशकश करके अर्थात क्रूस को छोड़ देने या उस पर रहने की बातों से यीशु के कान खा रखे थे।

विश्वास करने वाले डाकू को दिए उत्तर में यीशु का *आशा* का संदेश था: ''मैं तुझ से सच कहता हूं, कि आज ही तू मेरे साथ स्वर्गलोक में होगा'' (आयत 43)।

शायद हमें यह ध्यान देना चाहिए कि यह उस डाकू की तरह बचाए जाने विशेष तौर पर बिना बपतिस्मे के[5] आशा का संदेश नहीं है। उस डाकू का उद्धार यीशु की *मृत्यु से* पहले हुआ था;[6] जिस कारण वह पुराने नियम में उद्धार पाने का उदाहरण है; न कि नये नियम में (कुलुस्सियों 2:14; इब्रानियों 9:16, 17)।[7] नये नियम में हमें विश्वास करके बपतिस्मा लेने के लिए कहा गया है (मरकुस 16:16)।

इसके अलावा यह ''मरते हुए उद्धार पाने'' के बारे में आशा का संदेश नहीं है। जहां तक हमें पता है कि यीशु के बारे में जानने का डाकू को पहली बार अवसर मिला था। वह उन लोगों जैसा नहीं है, जो बार-बार इसी उम्मीद से सुसमाचार को ठुकरा देते हैं कि मरने की स्थिति होने पर इसे मान लेंगे; किसी ने कहा है कि ''ग्यारह बजे''[8] अर्थात अन्तिम समय में उद्धार पाने की उम्मीद करने वाले 10:30 बजे ही मर जाते हैं!

फिर यीशु की बातें आशा के वचन कैसे हैं? पहले तो वह आशा का संदेश इसलिए है कि उसने पहले डाकू के सुझाव को ठुकरा दिया और दूसरे के सुझाव को माना। ''सत्य'' शब्द का अनुवाद ''आमीन''[9] के लिए यूनानी शब्द से हुआ है। यानी यीशु के कहने का अर्थ था, ''आमीन, ऐसा ही हो! मैं मरूंगा ताकि सारी मनुष्यजाति को स्वर्गलोक में जाने की उम्मीद दे सकूं। मैं परमेश्वर की योजना को पूरा करूंगा!'' पूरे स्वर्ग ने राहत की सांस ली होगी।

फिर, यीशु की बातें आशा का संदेश हैं, क्योंकि उन्हीं से पता चलता है कि किसी का जीवन चाहे कितना भी आशाहीन क्यों न लगता हो, फिर भी उसका उद्धार हो सकता है। किसी ने सुझाव दिया है कि डाकू ने ''एक बार मांगा, एक बार ढूंढ़ा; एक ही बार खटखटाया और अपने जीवन के अन्तिम दिन बचाया गया था।'' यदि डाकू का उद्धार हो सकता है तो आपका भी हो सकता है, चाहे जीवनभर आप कितने भी पापी क्यों न रहे हों। निश्चय ही आपका जीवन उस अपराधी से बुरा नहीं हो सकता, जिसने यह मान लिया था कि वह क्रूस पर चढ़ाए जाने के योग्य है (लूका 23:41)।[10]

इसके अलावा आशा उन सब प्रियजनों के लिए भी है, जो अभी तक प्रभु की ओर नहीं मुड़े। उन्हें मत छोड़ें। यदि डाकू के लिए आशा थी तो उनके लिए भी आशा है! मसीह के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है।

एकान्त के वचनः ''देख तेरा पुत्र''
(यूहन्ना 19:25-27)

कलवरी का दृश्य आंखों के सामने लाते ही हम यह देखकर धन्यवाद करते हैं कि वहां उपस्थित सब लोग यीशु को ठट्ठों में उड़ा नहीं रहे थे। कुछ लोग ऐसे भी थे, जो यह सब देख कर दुःखी थे। यूहन्ना ने लिखा है कि ''यीशु के क्रूस के नीचे उसकी माता और उसकी मौसी क्लियोपास की पत्नी मरियम और मरियम मगदलीनी खड़ी थी'' (यूहन्ना 19:25)। आयत 26 में कहा गया है कि यूहन्ना प्रेरित भी वहीं था! यीशु के अगले शब्द अपनी माता और यूहन्ना के लिए थे:

> यीशु ने अपनी माता और उस चेले को जिस से वह प्रेम रखता था, पास खड़े देखकर अपनी माता से कहा; हे नारी, देख, यह तेरा पुत्र है। तब उस चेले से कहा, यह तेरी माता है, और उसी समय से वह चेला, उसे अपने घर ले गया (यूहन्ना 19:26, 27)।

इस एक घटना से कई सबक लिए जा सकते हैं। पहले तो यह कि यीशु अपनी मां की सेवा करता था। पौलुस ने बताया है, ''यदि कोई अपनों की और निज करके अपने घराने की चिन्ता न करे, तो वह विश्वास से मुकर गया है, और अविश्वासी से भी बुरा बन गया है'' (1 तीमुथियुस 5:8)। यीशु के भाई विश्वासी नहीं थे,[11] जिस कारण वह अपनी मां की ज़िम्मेदारी उन्हें नहीं देना चाहता था, इसलिए उसने अपने बाद उसकी देखभाल के लिए यूहन्ना से कहा।[12]

फिर, बेशक यीशु अपनी माता से प्रेम करता था परन्तु उसने उसे सम्मान ''स्वर्ग की रानी'' या ''परमेश्वर की मां'' नहीं, बल्कि उसे ''हे स्त्री'' कह कर बुलाया। परन्तु यह सम्बोधन उसके लिए कोई अपमानजनक शब्द नहीं था[13] क्योंकि यूनानी भाषा में यह शब्द अपनेपन को दिखाता है, परन्तु यह उन ईश्वरीय उपाधियों से बहुत कम है, जो लोग मरियम को देते हैं। इस प्रकार यीशु के अपने शब्दों में भी मरियम से प्रार्थना करने का विरोध है।

यीशु के शब्दों के महत्व को और ध्यान से देखते हैं। कलवरी पर मुख्य व्यक्ति मरियम या यूहन्ना नहीं, बल्कि यीशु था। यीशु की दृष्टि से इस दृश्य को देखें। उसे अपनी माता का ध्यान था, अपना नहीं। शमौन ने मरियम को बताया था, ''तेरा प्राण भी तलवार से वार पार छिद जाएगा'' (लूका 2:35)। मरियम के दिल पर तलवार अपने पुत्र को क्रूस पर चढ़े हुए देखकर ही चल चुकी थी। यीशु चाहता था कि मरियम को वहां से दूर ले जाया जाए। कइयों का मानना है कि ''उसी समय[14] वह चेला उसे अपने घर ले गया,'' यह संकेत देता है कि मरियम बेहोश हो गई थी, इसलिए यूहन्ना तुरन्त उसे अपने घर ले गया।

यीशु के शब्दों से मरियम को सहायता मिली;[15] परन्तु उन्होंने उसे कहां छोड़ा? उन्होंने उसे एक मां की सांत्वना से वंचित कर दिया। यीशु के शब्द एकान्त के शब्द हैं। उसकी मां की उपस्थिति को वैसे ही हटा दिया गया, जैसे थोड़ी देर बाद उसके स्वर्गीय पिता की उपस्थिति को हटा लिया जाना था। पाप की शक्ति को हराने के अपने संघर्ष में यीशु का *एकान्त* में होना आवश्यक था!

हो सकता है कि मुझे पूरी तरह समझ न आए कि परमेश्वर की उपस्थिति के बिना होने का क्या अर्थ हो सकता है; परन्तु मैं मानवीय प्रेम की उपस्थिति के न होने को समझ सकता हूं। मुझे

पता है कि एकान्त क्या होता है, आप भी जानते हैं। इस प्रकार हमें मालूम है कि यीशु को पता होता है कि जब हम एकान्त में होते हैं तो उस पर विजयी होने में वह हमारी सहायता कर सकता है, जैसे वह स्वयं विजयी हुआ था!

कष्ट के वचन: ''तू ने मुझे क़्यों छोड़ दिया?'' (मत्ती 27:46)

दृश्य तैयार हो चुका था। गुलगुता पर एक चमत्कारी अंधेरा छा गया, जिसने मानवीय आंखों से यीशु का रूप छिपा लिया। ठट्ठा करने वालों की भीड़ स्तब्ध थी। डर एवं भय प्रत्येक मन पर छाया हुआ था। वह मौन केवल यीशु दाएं-बाएं क्रूस पर चढ़े डाकुओं की हिचकियों और चिल्लाहट से ही भंग हो रहा था। अचानक अंधेरे से कुछ शब्द निकले और मौन टूट गया, ''तीसरे पहर के निकट यीशु ने बड़े शब्द से पुकारकर कहा, एली, एली, लमा शबक्तनी?'' (मत्ती 27:46)। ये शब्द भजन संहिता 22 में यीशु के बचपन के थे।[16] मत्ती ने समझाया कि इन शब्दों का अर्थ है कि ''हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तू ने मुझे क्यों छोड़ दिया है?'' (आयत 46)।

छोड़ देना किसी भी भाषा का सबसे पीड़ादायक शब्द है। यूनानी भाषा में यह तीन शब्दों अर्थात ''छोड़ देना,'' ''अलग हो जाना'' और ''नीचे'' को मिलाकर बना एक मिश्रित शब्द है, जो पराजय एवं विवशता का सुझाव देता है; और ''मैं'' स्थान या स्थिति के विषय में है।

यीशु को छोड़ा ही नहीं गया था। वह परमेश्वर की ओर से त्यागा गया था। यह शब्द मानवीय समझ से परे जाकर हमें छुटकारे के भेदों में ले जाता है। यशायाह 59:1, 2 में सिखाया गया है कि पाप हमें परमेश्वर से दूर करता है। 2 कुरिन्थियों 5:21 में हम पढ़ते हैं कि यीशु को ''हमारे लिए पाप ठहराया'' गया।[17] यीशु ने हमारे लिए पाप बन कर हमारे पापों का दण्ड अपने ऊपर ले लिया। पाप की अंतिम सजा परमेश्वर की ओर से त्यागे जाना है (2 थिस्सलुनीकियों 1:9)!

यीशु हमें बचाने के लिए *कहां तक* जाने को तैयार था? मत्ती 27:46 इस दूरी को बताता है। यीशु ने स्वर्ग की महिमा को छोड़ा बल्कि वह इससे भी आगे बढ़ गया। वह मनुष्य और सेवक के रूप में इस पृथ्वी पर आ गया; बल्कि इससे आगे बढ़ गया। उसने अपमान और ठुकराए जाने को ही नहीं सहा, बल्कि इससे आगे बढ़ गया। उसे क्रूस दिया गया, परन्तु सफर अभी खत्म नहीं हुआ। हमें बचाने के लिए वह परमेश्वर की ओर से त्यागे जाने की जगह पर जाने को तैयार था।

मैं इसे कभी नहीं समझ सकता। यीशु हमारे लिए यह सब कुछ कैसे कर सका? वह मुझसे और आप से इतना प्रेम कैसे कर सकता था। इसके अलावा यीशु क्रूस पर संक्षिप्त समय में पापियों की गलती का सार्वकालिक दण्ड कैसे सह सकता था, वह सीमित समय में असीमित बोझ को कैसे सह सकता था? मुझे इनमें से किसी की भी समझ नहीं आती, परन्तु विश्वास से मैं मानता हूं। मैं परमेश्वर के ''उस दान के लिए जो वर्णन से बाहर है, धन्यवाद'' (2 कुरिन्थियों 9:15) करता हूं।

थकावट के वचन: ''मैं प्यासा हूं'' (यूहन्ना 19:28)

तीन घंटे तक सारे देश पर अंधेरा छाया रहा। क्रूस के निकट खड़े लोगों को लगा कि अब कभी धूप नहीं निकलेगी। अन्त में अंधेरा छंट गया और सूर्य निकल आया। अंधेरे के राजकुमार ने धर्म के सूर्य को मिटाने का बहुत प्रयास किया, परन्तु वह सफल न हो सका। अब पहली बार यीशु

ने उत्तम पुरुष सर्वनाम का इस्तेमाल किया। ''इसके बाद यीशु ने यह जानकर कि अब सब कुछ हो चुका; इसलिए कि पवित्र शास्त्र की बात पूरी हो कहा, मैं प्यासा हूं'' (यूहन्ना 19:28)।

इन शब्दों में कितना धीरज है! मैं होता तो पता नहीं कितनी देर उस असहनीय पीड़ा को और कष्ट के विषय में बताता रहता। यीशु ने यूनानी भाषा में यह शब्द कहा, जिसका अनुवाद तीन शब्दों में हुआ है, ''मैं प्यासा हूं।'' यह न तो शिकायत थी और न विनती; बल्कि एक सीधी सी सच्चाई थी।

इन शब्दों में से एक स्पष्ट शिक्षा है कि यीशु पूरी तरह मांस और लहू था। उसे हमारी तरह ही भूख लगती थी।[18] इसलिए वह हमारे साथ सहानुभूति कर सकता है:

> क्योंकि हमारा ऐसा महायाजक नहीं, जो हमारी निर्बलताओं में हमारे साथ दुखी न हो सके; ... इसलिए आओ, हम अनुग्रह के सिंहासन के निकट हियाव बांधकर चलें, कि हम पर दया हो, और वह अनुग्रह पाएं, जो आवश्यकता के समय हमारी सहायता करे (इब्रानियों 4:15, 16)।

परन्तु इन शब्दों के *समय से* और भी महत्वपूर्ण सबक मिलते हैं। यीशु ने ये शब्द तब कहे जब उसने देखा कि ''अब सब कुछ हो चुका'' (यूहन्ना 19:28)। ये शब्द वास्तव में नरक की आग में जीभ तालू से लग जाने के बाद कहे गए थे।[19] पाप से अपनी लड़ाई के बाद ही यीशु को अपना ध्यान आया, और वह भी बड़े मद्धम शब्दों में। उसके शब्द एक थके हुए विजेता अर्थात लम्बी दौड़ वाले के थे, जो रस्सी को हाथ लगाने के बाद केवल ''पानी'' ही पुकारता है।

विजय के वचन: ''पूरा हुआ'' (यूहन्ना 19:30)

विजय के वचनों के लिए मंच तैयार हो चुका था। यदि किसी को संदेह हो कि क्रूस पर यीशु की लड़ाई के बाद क्या परिणाम होगा, तो यूहन्ना 19:30 पर विचार करें: ''जब यीशु ने वह सिरका लिया, तो कहा, पूरा हुआ ...।''

''पूरा हुआ'' के दो शब्दों की जगह मूल बाइबल में एक ही शब्द है *tetelestai* (टेटेलेस्टाई)। इस यूनानी शब्द का पूरा अर्थ है ''पूरा हुआ है और इस कारण हमेशा के लिए खत्म हो गया है।'' *टेटेलेस्टाई* किसान द्वारा इस्तेमाल किया जाने वाला शब्द है। जब कोई जानवर इतने बढ़िया ढंग से उसके खेत में जन्म लेता कि उसमें कोई विकार न होता तो किसान पुकार उठता, *''टेटेलेस्टाई, टेटेलेस्टाई!''* यह किसी कलाकार द्वारा इस्तेमाल किया जाने वाला शब्द था। चित्रकार या मूर्तिकार कपड़े या संगमरमर पर अपना चित्र या मूर्ति पूरी हो जाने के बाद अपने काम को कुछ फुट पीछे हटकर हर्ष से मन ही मन पुकारता था, *''टेटेलेस्टाई, टेटेलेस्टाई!''* इसी शब्द *टेटेलेस्टाई* का इस्तेमाल यीशु ने भी किया। जो कुछ उसने किया था, वह पूरा हुआ और सिद्ध था। क्रूस के कदमों में खड़े लोग कह रहे थे, ''यीशु का जीवन बेकार गया, परन्तु यीशु कह रहा था, यह सफल हुआ है।''

''पूरा हुआ'' कहकर यीशु अपने जीवन की अन्त की बात ही नहीं कह रहा था। वह तो यह कह रहा था कि जो कुछ वह करने आया था, वह पूरा हो गया है। एक काम जिसे वह पूरा करने

आया था, वह पुराने नियम को पूरा करना था (मत्ती 5:17)। उसने इसको पूरा कर दिखाया था; अब पुराने नियम को एक ओर किया जा सकता था। ताकि नये नियम को लागू किया जा सके (इब्रानियों 9:15, 16; 10:9)। पुराना नियम पूरा हो गया था (कुलुस्सियों 2:14); व्यवस्था के रूप में दस आज्ञाएं पूरी हो गई थीं (2 कुरिन्थियों 3:1-11); सातवें दिन का सब्त पूरा हो गया था (कुलुस्सियों 2:16)।

सबसे महत्वूपर्ण, उद्धार का काम पूरा हो गया था। यशायाह 53:6 का काम पूरा हो गया था: ''हम तो सब के सब भेड़ों की नाईं भटक गए थे; हम में से हर एक ने अपना-अपना मार्ग लिया; और यहोवा ने हम सभों के अधर्म का बोझ उसी पर लाद दिया।'' 1 तीमुथियुस 2:6 का काम पूरा हो गया था: ''जिस ने अपने आप को सब के छुटकारे के दास में दे दिया।'' प्रकाशितवाक्य 5:9 का काम पूरा हो चुका था: ''और वे यह नया गीत गाने लगे, कि तू ... योग्य है; क्योंकि तू ने वध होकर अपने लहू से हर एक कुल, और भाषा, और लोग, और जाति में से परमेश्वर के लिए लोगों को मोल लिया है।''

एक याद रखने वाली बात है। यीशु का काम पूरा हो चुका था, मनुष्य का काम पूरा होना अभी बाकी था। जॉर्ज फ्रैड्रिक ने जब अपनी पुस्तक, ''दि मसायाह'' पूरी कर ली तो उसने कहा, ''पूरी हो गई।'' परन्तु उसका कुछ भाग ही पूरा हुआ था। यदि उस भाग को लेकर कोई उसे गाता न तो सुन्दर संगीत-रचना न बनती। यीशु का काम पूरा हो गया हो सकता है, परन्तु हमें अभी भी बताया गया है कि ''डरते और कांपते हुए अपन-अपने उद्धार का काम पूरा करते जाओ'' (फिलिप्पियों 2:12; KJV)।

समर्पण के वचन: ''तेरे हाथों में'' (लूका 23:46)

त्रासदी खत्म हो गई थी, केवल कुछ बातें कहने को शेष थीं। यीशु इस जीवन को त्यागने को था। तब यीशु ने ऊंचे स्वर में पुकार कर कहा कि ''हे पिता, मैं अपनी आत्मा तेरे हाथों में सौंपता हूं: और यह कहकर प्राण छोड़ दिए'' (लूका 23:46)। बाद में पिलातुस स्तब्ध था कि यीशु की मृत्यु इतनी जल्दी कैसे हो गई (मरकुस 15:44)।[20] यीशु ने पहले ही कह रखा था, ''मैं अपना प्राण देता हूं, कि उसे फिर ले लूं। कोई उसे मुझ से छीनता नहीं, वरन मैं उसे आप ही देता हूं'' (यूहन्ना 10:17, 18)। मृत्यु यीशु पर नहीं आई, वह स्वयं इससे मिलने गया।

आमतौर पर, मरने वाला मरने से पहले अपना सिर ऊपर उठाता है, जिससे फेफड़ों में अधिक से अधिक हवा भर सके, तब सिर लटक जाता है। परन्तु यीशु ने ''*सिर झुकाकर* प्राण त्याग दिए'' (यूहन्ना 19:30) जो इस बात का स्पष्ट संकेत था कि उसने अपनी जान अपनी इच्छा से दी। अगस्टिन ने कहा, ''उसने अपना जीवन दिया *क्योंकि* उसने इसे देना चाहा था। *जब* उसने चाहा और जैसे उसने चाहा।''

छुटकारे के काम को समेटते हुए यीशु ने कहा ''हे पिता, मैं अपनी आत्मा *तेरे* हाथों में सौंपता हूं'' (लूका 23:46)। यीशु मृत्यु में अपनी आत्मा परमेश्वर को सौंप सका क्योंकि उसने परमेश्वर के प्रति समर्पण से जीवन बिताया था। इसी प्रकार आप और मैं भी यदि मृत्यु में उसको स्वयं को सौंप देना चाहते हैं तो जीवन में भी स्वयं को सौंप दें।

सारांश

क्रूस से क्षमा, आशा, एकान्त, कष्ट, थकावट, विजय एवं समर्पण के कितने ज़बर्दस्त सबक दिए गए हैं। इन शिक्षाओं से लाभ लेने के लिए हमें उससे जिसने ये बातें कहीं, अपना सम्बन्ध पक्का करना आवश्यक है। गलातियों 3:26, 27 में पौलुस ने ध्यान दिलाया है: ''क्योंकि तुम सब उस *विश्वास* करने के द्वारा *जो मसीह यीशु पर है,* परमेश्वर की सन्तान हो। और तुम में से जितनों ने *मसीह में बपतिस्मा लिया* है उन्होंने मसीह को पहिन लिया है।''

विश्वास और बपतिस्मे के द्वारा मसीह को पहनने के बाद, हमारे लिए उसके पीछे चलना और आवश्यकता पड़ने पर मरना भी आवश्यक है। यीशु ने कहा, ''यदि कोई मेरे पीछे आना चाहे, तो अपने आप से इनकार करे और प्रति दिन अपना क्रूस उठाए और मेरे पीछे हो ले'' (लूका 9:23)। क्या हम उस सब कुछ के लिए जो यीशु ने हमारे लिए किया, उसके धन्यवादी हैं? यदि हैं तो हम उसके पीछे कहीं भी चलने के लिए तैयार होंगे!

टिप्पणियां

[1]इस प्रवचन का विचार कई प्रचारकों द्वारा इस्तेमाल किया जा चुका है। यह विशेष प्रवचन विभिन्न स्रोतों का इस्तेमाल करते हुए कई साल पहले तैयार किया गया था। [2]दाऊद चौथा हो सकता है (देखें 2 शमूएल 23:1)। [3]यीशु को शैतान के शब्दों में यही संकेत था। [4]कई जगह कहा जा सकता है, ''... यदि कोई भत्ता नहीं है।'' [5]यह विश्वास करने वाले लोग कि उद्धार के लिए बपतिस्मा आवश्यक नहीं है, आमतौर पर अपने विश्वास को ''प्रमाणित'' करने के लिए क्रूस पर बचाए जाने वाले डाकू का उदाहरण देते हैं। [6]कुछ लोगों को डाकू के बचाए जाने में संदेह है। परन्तु ''स्वर्गलोक'' का मूल अर्थ ''आनन्द का वन'' है। यह ''अब्राहम की गोद'' (लूका 16:23) के समान लगता है, जो अधोलोक का भाग है, जहां न्याय के लिए धर्मी लोग प्रतीक्षा करते हैं। पतरस ने यह स्पष्ट कर दिया कि मृत्यु के बाद यीशु अधोलोक (मृतकों की अदृश्य अवस्था) में गया (प्रेरितों 2:27, 31)। बेशक, यीशु वहीं गया जहां लाज़र और अब्राहम थे। डाकू को यीशु की यह प्रतिज्ञा थी कि ''उसी दिन'' वह वहां होगा। [7]यह सुझाव देने वाले लोग कि हमारा ''उद्धार भी वैसे ही हो सकता है, जैसे डाकू का हुआ था,'' उद्धार या मुक्ति की शर्त के रूप में बपतिस्मे को निकालने में दिलचस्पी लेते हैं। लगता है कि वे कभी यह विचार नहीं करते कि डाकू का मनपरिवर्तन बाइबल में सबसे कठिन है: वह उस समय विश्वास में आया जब अधिकतर लोग अपना विश्वास त्याग देते हैं। उसने मसीहा के बारे में यहूदियों के विचार पर नियन्त्रण पाया, जबकि दूसरे सब लोगों पर वही विचार हावी रहा था। उसने यीशु के पक्ष में उस समय बात की जब दूसरी हर आवाज़ उस पर दोष लगा रही थी। इसके अलावा यह सब उसने उस असहनीय पीड़ा के बावजूद किया जो उसके दिलो-दिमाग पर छाई हुई थी। मुझे नहीं लगता कि आज कोई वैसे ही उद्धार पाना चाहता होगा ''जैसे डाकू का उद्धार हुआ था''! [8]मत्ती 20:1-16. [9]KJV में ''verily'' है। [10]बीच वाला क्रूस बरअब्बा का ही बनता था इसलिए दोनों डाकू उसी के शिष्य, या उसके सिपाही हो सकते हैं। बरअब्बा की तरह ही वे भी हत्या और विद्रोह के दोषी होंगे (यूहन्ना 18:40; लूका 23:19)।

[11]यूहन्ना 7:5. बेशक यीशु की मृत्यु तक उसके भाई विश्वासी नहीं थे, परन्तु उसके जी उठने के बाद उनमें से कुछ लोग या सभी मसीही बन गए थे (प्रेरितों 1:14)। [12]इससे यह संकेत जाता है कि यीशु का वैधानिक पिता यूसुफ मर चुका था। यीशु की निजी सेवकाई के समय यूसुफ का कहीं उल्लेख नहीं है, इसलिए हो सकता है कि वह यीशु के तीस वर्ष का होने से पहले मर गया हो। [13]आज कई समाजों में ''स्त्री'' शब्द को निरादर वाला माना जाता है। [14]इस वाक्यांश का अर्थ आमतौर पर ''तुरन्त'' होता है। बर्कले के संस्करण में ''उसी पल से'' है। [15]मरियम के लिए क्रूस पर रहना कठिन होगा। उसे लेकर जाना भी कठिन होगा, परन्तु अन्त में मरियम को लाभ हुआ। उसे यीशु के साथ

स्वाभाविक मेल से मसीह के साथ आत्मिक मेल में लाया गया था। उसने पाया कि पुत्र से बढ़कर उद्धारकर्त्ता के रूप में यीशु को पाना बेहतर था। [16]आयत 1. [17]यह KJV की शब्दावली है। [18]मत्ती 4:2; यूहन्ना 4 भी देखें। [19]यह कहना असंगत नहीं होगा कि यीशु ने हमारे लिए ''नरक का दण्ड सहा'' (2 थिस्सलुनीकियों 1:7-9)। [20]क्योंकि क्रूस दिए जाने में कोई नाजुक अंग सीधे तौर पर शामिल नहीं होता था इसलिए क्रूस पर दिए जाने वाले लोग कई-कई दिन बाद मरते थे। दो डाकुओं को जल्दी मारने के लिए, सिपाहियों ने उनकी टांगें तोड़ दीं (यूहन्ना 19:31) ताकि वे लम्बी सांस लेने के लिए अपना शरीर ऊपर न उठा सकें और उनका दम घुट जाए।